Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 16, Issue No. 6, May-2019, ISSN 2230-7540

ब्रिटिश राज में भारत की राजनीतिक स्थिति

Rupa Kumari[1]* Dr. Viveka Nand Shukla[2]

[1] PhD Holder, B. R. A. Bihar University, Muzaffarpur

[2] Professor, Department of History, B.R.A. Bihar University, Muzaffarpur

सार – *यह लेख भारतीय समाज के दो प्रमुख पहलुओं की जाँच करता है, अर्थात् भारत के लम्बे और विविध समाज का निर्माण जो इससे विकसित हुआ द्रविड़ियन और इंडो-आर्यन परिवार जो पंद इंडियन सोसाइटी' हैं, बहु भाषाओं के साथ। यह भी तर्क है कि ब्रिटिश ने भारतीय सामाजिक कपड़ों को कैसे तबाह किया पश्चिमी शिक्षा, भूमि बस्तियों, सामाजिक बुराई के खिलाफ कानून की शुरूआत। ईसाई मिशनरियों को परिवर्तन करने के लिए एक उपकरण के रूप में उपयोग किया जाता था भारतीय समाज में। यह लेख आधुनिक के मुद्दे पर अंग्रेजी और भारतीयों विद्वानों के बीच उभरे परस्पर विरोधी विचारों के बारे में भी चर्चा करता है शिक्षा। भारतीय समाज एक जटिल समाज है जिसमें कई धर्मों, भाषाओं, रीति-रिवाजों और परंपराओं के साथ क्षेत्रीय विविधता है जो कि रही है प्राचीन काल से विकसित। यह समाज विभिन्न साम्राज्यों के तहत बदल रहा है और अंत में इसे बहु-संस्कृति के साथ 'भारतीय समाज' के रूप में तैयार किया गया है भाषाओं। हालाँकि, भारत आने पर अंग्रेजों को भारतीय समाज की बुराइयों का एहसास हुआ, जो चार्ल्स ग्रांट ने अपने पर्चे में बताई थी, अवलोकन और उन्होंने सुझाव दिया कि भारतीय समाज के आधुनिकीकरण की कुंजी अंग्रेजी शिक्षा थी। कार्ल मार्क्स ने भी दोहरी भूमिका की ओर संकेत किया है ब्रिटिशों का 'विनाशकारी' और ब्रिटिश भारत का 'पुनर्योजी' चरण। लगभग दो शताब्दियों तक, अंग्रेजों का भारतीय पर प्रभावी नियंत्रण था सीधे उपमहाद्वीप और इस पर काफी प्रभाव डाला। शासन के दौरान, अंग्रेजों को भारत में आधुनिक शिक्षा की शुरुआत के लिए आवश्यकता का एहसास हुआ, जैसा कि प्राच्य शिक्षा थी, कोई रास्ता नहीं, इस देश के लोगों के लिए फायदेमंद, जैसा कि उन्होंने आरोप लगाया। इसके विपरीत, भारतीय राष्ट्रवादी, विशेष रूप से 20 वीं शताब्दी की पहली तिमाही में थे आधुनिक शिक्षा की आलोचना के रूप में इसने भारत की सांस्कृतिक परंपराओं का अवमूल्यन किया था। नतीजतन, साहित्य की एक बड़ी मात्रा के दौरान प्रचलन में आया स्वतंत्रता संघर्ष जिसने भारतीयों को उनके मूल सांस्कृतिक मूल्यों के लिए उकसाया। हालाँकि, इस लेख में, ब्रिटिश शिक्षा नीति पर जमकर बहस हुई है और 'प्रतिबंधित और विवादास्पद साहित्य' के प्रकाश में फिर से जांच की गई शिजसने भारतीय संस्कृति के संरक्षण पर जोर दिया। यह लेख पाठ्य पर आधारित है विश्लेषण जो यह साबित करने की कोशिश करता है कि ब्रिटिश शिक्षा नीति का अंतिम लक्ष्य औपनिवेशिक शासन के तहत भारतीय लोगों के सांस्कृतिक मूल्यों पर बहस करना था।*

शब्द कुंजी :- *भारतीय समाजय प्रवासीय शासनविधिय ईसाई मिशनरीय शिक्षाय आधुनिकीकरणय समृद्ध साहित्य*

----------X----------

प्रस्तावना

भारत में ब्रिटिश शासन की स्थापना के बाद से, पश्चिमी और भारतीय दृष्टिकोण से अंग्रेजों की छवि के बारे में विभिन्न तर्कों को आगे बढ़ाते हुए सामाजिक वैज्ञानिकों को रखा गया है। ब्रिटिश विद्वानों ने एक हाथ में 'सभ्य राष्ट्र' की छवि पेश की है और उन्होंने दूसरी ओर भारत को 'पिछड़ा और असभ्य' देश घोषित किया है। ऐसा करके, अंग्रेजों ने पश्चिम की श्रेष्ठता को स्वीकार करने के लिए भारतीय शिक्षित दिमागों को मनोवैज्ञानिक रूप से तैयार किया था और उन्होंने भारतीयों को अपनी परिकल्पना को स्वीकार करने के लिए तैयार किया कि भारत के विकास और आधुनिकीकरण की बुरी तरह से आवश्यकता थी जिसके लिए अंग्रेज ब्रिटेन से आए थे। भारतीयों को सभ्य बनाने के लिए भारत। इंग्लिश ईस्ट इंडिया कंपनी के एक सेवक चार्ल्स ग्रांट ने इंग्लैंड लौटने पर 'ऑब्जर्वेशन' नामक एक पुस्तिका प्रकाशित की, जिसमें उन्होंने ग्रेट ब्रिटेन के एशियाई विषयों के बीच राज्य और समाज का एक महत्वपूर्ण विश्लेषण किया, खासकर नैतिकता के संबंध में। और ज्ञान प्रदान करने के साधनों पर। उन्होंने भारतीय समाज की विभिन्न बुराइयों के वर्णन के साथ शुरुआत की। भारतीय समाज के बारे में चर्चा करते हुए, उन्होंने बंगाल के हिंदुओं पर बेईमानी, भ्रष्टाचार, आपसी

www.ignited.in

घृणा और अविश्वास का आरोप लगाया और सती जैसे उनके रिवाज को बर्बर बताया। यहां तक कि भारतीय ने भी इस पद को स्वीकार किया और यह राम मोहन राय के पत्र से स्पष्ट होता है कि 1824 में तत्कालीन गवर्नर जनरल लॉर्ड एमहर्स्ट ने आधुनिक शिक्षा की शुरुआत करने की दलील दी थी क्योंकि बुद्धिजीवियों का सांस्कृतिक संसार ब्रिटिश शिक्षा द्वारा आकार दिया गया था। पश्चिमी ज्ञान की तुलना में शिक्षा की भारतीय पारंपरिक प्रणाली को अपर्याप्त और स्थिर माना जाता था, भले ही इसकी पहुँच काफी संतोषजनक हो। राम मोहन राय के शब्दों में शिक्षा की पारंपरिक प्रणाली नेंज व्याकरणिक बारीकियों के साथ युवाओं के दिमाग को उतारा और उनके पास या समाज के लिए बहुत कम या कोई व्यावहारिक उपयोग के मेटाफिजिकल भेद नहीं थे।' इसके विपरीत, उत्तरी भारत के विभिन्न स्थानों पर बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में प्रकाशित बड़ी संख्या में पर्चे और पत्रक ब्रिटिश शासन की ज्वलंत तस्वीरें बताते हैं। रामसुहाग के जप भारतीयन 'नामक इस तरह का एक पत्रक, ब्रिटिश राज के तहत भारतीयों के कष्टों का लेखा-जोखा देता है और यह लोगों को देश के कल्याण के लिए एकजुट होने का संदेश देता है। ऐसा करने पर, हिंदू, मुस्लिम, सिख, पारसी, ईसाई और अन्य लोग ब्रिटिश शासन के वास्तविक स्वरूप को जानेंगे और इससे उन्हें देश के विकास के लिए अपनी नीति को आकार देने में मदद मिलेगी। रामसुभग के अनुसार, ब्रिटिश सरकार भारतीयों के साथ विभिन्न प्रकार के कृत्यों के माध्यम से हर जगह लगातार अन्याय कर रही थी, जिसने भारतीयों को कमजोर कर दिया था और इसने उन्हें असहज कर दिया थाय इसके मद्देनजर, भारत माता अत्यंत दुःख के साथ विलाप कर रही थी और अपने बेटे से यह सोचने के लिए कह रही थी। आलोचना का दूसरा बिंदु सांस्कृतिक दृष्टिकोणों से था कि रेलवे, स्टीमर और मोटर के उपयोग ने भारतीय परिवहन की पारंपरिक प्रणाली को नष्ट कर दिया था जिसमें गायों और भैंसों की स्थिति कम हो गई थी जो कि प्राचीन काल से भारत में पवित्र थे।

1. आओ, आओ हम भारत के कल्याण पर एक साथ विचार करें, हे भारतीयों!

2. हिंदुओं, सिखों, पारसियों और ईसाइयों को आकर, एक दूसरे को गले लगाओ, हे भारतीयों!

3. वर्तमान सरकार के भयानक अन्याय के कारण, भारत माता विलाप कर रही है, हे भारतीयों!

4. विभिन्न प्रकार के कृत्यों को लागू करके, (उन्होंने) हमें असहज कर दिया, हे भारतीयों!

5. रेलवे, स्ट्रीमर, डाक्स और मोटर्स को खोलकर, (उन्होंने) हमें असहज बना दिया, हे भारतीयों!

6. गायों, बैल और भैंसों की बलि देकर, (उन्होंने) भारत को नष्ट कर दिया, हे भारतीयों!

1919 की पंजाब की घटना के बारे में बताते हुए, पत्रक भारती ने बड़े दर्द और दुःख के साथ कहा कि जब भी हम पंजाब के उस घटना को याद करते हैं, तो हमारे दिल में खलबली मच जाती है, जहाँ कुशल प्रशासन के नाम पर निहत्थे बच्चों, युवाओं और बूढ़ों और महिलाओं को मार दिया जाता है। यहाँ तक कि जो लोग शांति, अहिंसा और सच्चाई से चिपके हुए थे, उन्हें भी नहीं बख्शा गया और जेल भेज दिया गया। इसे देखते हुए, कोई भी अंग्रेजों के स्वभाव और चरित्र पर विश्वास नहीं कर सकता था, क्योंकि अंग्रेज रावण और कंस की तरह काम कर रहे थे। महात्मा गांधी, शौकत अली, लाला लाजपत राय, जवाहर लाल नेहरू, सीआर दास और अन्य की प्रशंसा करते हुए, रामसुभग (पत्रक का लेखक) का तर्क है कि वे इस देश के लोगों के कल्याण के लिए काम कर रहे थे, जिसके लिए वे जेल में परेशानियों का सामना कर रहे थे। । सत्येन्द्र नाथ मजुमदार ने अपने बंगाली पैम्फलेट के शीर्षक में, स्वधिनार डाबी (स्वतंत्रता के लिए दावा) का तर्क है कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा स्वतंत्रता के लिए भारत का दावा 'न्याय' और 'तर्कशीलता' पर आधारित था। कांग्रेस के तर्कों का खंडन करने के लिए ब्रिटिश साम्राज्यवादियों के लेखकों ने इस दावे के खिलाफ अपने तर्कों को उन्नत किया कि भारतीय स्वयं को संचालित करने के लिए अयोग्य थे। ब्रिटिश परिकल्पना का मुकाबला करने के लिए, पैम्फलेट ने ब्रिटिश नीतियों का एक लेखा भी दिया जो भारत में अंग्रेजी शासन के पिछले दो सौ वर्षों के लिए लागू किया गया था। परिणामस्वरूप, भारत में ब्रिटिश साम्राज्य के विभिन्न हिस्सों में और इंग्लैंड में ही कई आंदोलनों और संघर्षों को देखा गया, लोगों के अपने अधिकारों का दावा करने की इच्छा के कारण। यह तर्क दिया गया है कि साम्राज्य के विभिन्न हिस्सों में स्वतंत्रता या स्वेच्छाचारिता की मांग अचानक नहीं की गई थी, लेकिन यह उस समस्या का एक परिणाम था जिसका भारतीय सामना कर रहे थे और जब लोगों को न्याय के संबंध में निराशा के लिए प्रेरित किया गया था। अच्छी सरकार, अत्याचार और उदासीनता ब्रिटिश साम्राज्यवादियों की कार्डिनल नीति थी।

भारत के मामले को कोई अपवाद नहीं कहा गया था, इसलिए, लेखक ब्रिटिश शासन के साथ तुलना करने के लिए हिंदू और मुहम्मडन काल के भारत के राजनीतिक इतिहास का एक संक्षिप्त विवरण देता है। पैम्फलेट आगे की जाँच करता है कि

www.ignited.in

भारत की ब्रिटिश सरकार ने भारतीय को केवल उनकी स्वतंत्रता से वंचित करने से नहीं रोका, बल्कि स्वयं को जनता के शोषण पर स्थापित करके, उन्होंने भारत की सभ्यता, अर्थव्यवस्था, राजनीतिक और आध्यात्मिक प्रगति पर विनाशकारी प्रभाव डाला। य इसलिए यह हमारा विश्वास था, पैम्फलेट लेखक कहते हैं, कि भारत के पास पूर्ण स्वराज की प्राप्ति के लिए कोई और रास्ता नहीं था, अर्थात, ब्रिटिश कनेक्शन को समाप्त करके पूर्ण स्वतंत्रता। कभी भी भारत की राजनीतिक दशा इतनी दयनीय नहीं थी जितनी कि ब्रिटिश शासन के अधीन हो गई थी। पैम्फलेट यह कहते हुए चला गया कि ब्रिटिश राज के तहत भारत की स्थिति सबसे खराब हो गई है और इसलिए, लेखक इसे ब्रिटिश प्रशासनिक प्रणाली के तहत मानवता और भगवान के खिलाफ एक क्षण के लिए एक पाप के रूप में मानते हैं जो हमारे देश पर भड़क गया था जीम चार स्वर्ण 'बुराइयाँ: राष्ट्रवाद का परिवर्तन जिसे हम आज देश में साहित्य, विज्ञान, संगीत और कला और उद्योग के रूप में हर जगह स्पष्ट रूप से देखते हैं। अंग्रेजों के शक्तिशाली प्रयासों ने भारत को एक पारंपरिक और निष्क्रिय सामाजिक जीवन से बाहर एक नया समाज बनाने के लिए बेचैन कर दिया है-वे सभी कुछ भी नहीं थे बल्कि स्वतंत्रता के अग्रदूत थे, वे विजयी मार्च के प्रस्तावक थे! इसी प्रकार श्री मुक्तजीव अपने हिंदी पत्रक में, गौरांग जी (बंदे मातरम) को अंग्रेजों पर बहुत संदेह के साथ मानते हैं और वह गोरों के कामों का लेखा-जोखा सुनाते हैं और अंग्रेजों को विभिन्न नामकरण के साथ बुलाते हैं और तर्क देते हैं कि अंग्रेज थे: धोखेबाज, चालाक, उत्पीड़क, बेईमान, शरारती, हत्यारे, नरक के कुत्ते, स्वार्थी, क्रूर, बेईमान, दुष्ट-कर्ता, डकैत, चोर, जेबकतर, अत्याचारी, बेपरवाह, लुटेरा, लुटेरा, रक्तबीज, तोता-आंखों वाले, विश्वासघाती, हरामी, बेईमान उत्पीड़क, गधे। इसमें यह भी चर्चा है कि अंग्रेज भारत में कैसे आए और हमारी संपत्ति को देखकर वे हमारे धन को छीनने के लालची हो गए। हमारे संसाधनों का दोहन करने के लिए, उन्होंने हमें छल और जालसाजी का एक सूत्र सिखाया, और हमें अपने भाइयों के बीच लड़ने के लिए बनाया और हमारे सभी को अपने कब्जे में कर लिया और उन्होंने हमें सूक्ष्म तरीके सिखाए। अंग्रेजों के खिलाफ निर्दोष भारतीय मन को आकर्षित करने के लिए पैम्फलेट के लेखक द्वारा इस्तेमाल किए गए इस तरह के अभद्र शब्द। देश के प्रेमियों को संबोधित एक दूसरे हाथ से लिखा पत्रक, ष्बंदे मातरम स्वाधीन भटट की जय ब्रिटिश शासन के तहत लोगों की पीड़ा के बारे में तर्क देता है। शुरुआत में लेखक ने प्रेमियों को यह पता लगाने और शहीदों के पते लेने के लिए कहा, जिन्होंने मातृभूमि के लिए अपने जीवन का बलिदान दिया।ब्रिटिश शासन की वास्तविक प्रकृति के बारे में भारतीय जागृत करने के लिए, पैम्फलेट का तर्क है कि मासूमों का खून कैसे बहाया गया, महिलाओं और बच्चों का कत्लेआम हुआ और विदेशी राक्षसों के दैहिक अत्याचार की नग्न तस्वीरें और आंसू की बूंदों के साथ अपनी आंखों को शुद्ध करना शहीदों का नाम। यह भी तर्क है कि वर्तमान ब्रिटिश सरकार ने धार्मिक पुस्तकों- हिंदू पंची, 'बालिदान' अंक, चंद का फाँसी और भारत पुरुष अंगरेजी राज पर मुकदमा चलाया और जब्त कर लिया, जिसने स्पष्ट शब्दों में इस राक्षसी सरकार के घातक कृत्यों की पुष्टि की। इन पुस्तकों की मुख्य विशेषताएं ब्रिटिश अत्याचारों का पुनरुत्पादन थीं जो कि टॉकी फिल्मों में पाए जा सकते हैं। उसी संस्था द्वारा परिचालित राजसी पत्ता के नाम पर 'णभेरी' (क्लेरियन कॉल) जैसे कुछ पत्रक जो मुस्कुराते हुए फांसी या आजीवन कारावास और निर्वासन का सामना करना पड़ा। लेकिन महादेव ने अपनी कविता में, कुंती बियोग में 'पूर्बी, धूना-देवरा योगिया' शीर्षक से एक हिंदी पुस्तिका में ब्रिटिश शासन के कुछ अन्य पहलुओं पर प्रकाश डाला, उदाहरण के लिए, न्याय की ब्रिटिश प्रणाली विशेष रूप से भारतीय हस्तशिल्प उद्योगों के संदर्भ में जहां उनका तर्क है कि राज के तहत देश में औद्योगीकरण हुआ था, जिससे बड़ी संख्या में लोग प्रभावित हुए, छोटे उद्योगों में लगे लोगों ने अपनी आजीविका के साधन खो दिए और इसलिए, अंग्रेजों से बदला लेने के लिए उन्होंने ब्रिटिश कपड़े नहीं छूने का फैसला किया था और इसके बजाय वह मोटिया कपड़ा तैयार करेगा और ऐसा करने से वह मैनचेस्टर और लंकाशायर मिलों को धूल में मिला देगा। मोटे कपड़े बनाने के लिए वह चरखा चलाती थी। वह आगे मानते हैं कि पहले भारतीय ब्रिटिश शासन से अनभिज्ञ थे लेकिन अब उन्हें ब्रिटिश शासन की वास्तविकता का एहसास हो गया था। न्याय की ब्रिटिश प्रणाली को महादेव प्रसाद ने अपने कुंती बियोग में भी पूछताछ की है। पंजाब की घटना के बारे में चर्चा करते हुए महादेव प्रसाद कहते हैं कि जलियांवाला बाग में, पुरुषों, महिलाओं और बच्चों को बिना किसी कारण के बड़ी संख्या में नरसंहार किया गया था, जिसने भारतीयों की भावनाओं को इस हद तक प्रभावित किया कि भारतीय और विशेष रूप से पंजाबी ब्रिटिश सरकार से सतर्क थे। जलियांवाला बाग में इस महान नरसंहार के बावजूद भारतीय ब्रिटिश सरकार के खिलाफ हिंसक नहीं हुए क्योंकि गांधीजी ने उन्हें ज्ञान (अहिंसा) का दर्शन सिखाया था।

1. अलास ओ क्रूरय आपने अन्याय किया।
2. जब से गांधी बाबा ने ज्ञान सिखाया है।
3. अलास ओ क्रूरय हम सतर्क हो गए।

www.ignited.in

4. जब हम पंजाब की घटनाओं को याद करते हैं।

5. अलास ओ क्रूर: हमारा दिल फट गया।

6. आपको छोटे बच्चों पर दया नहीं आई।

7. कास ओ क्रूरय ईश्वर साक्षी है।

8. हम आपके कामों को किससे कहें?

9. अलास ओ क्रूर, उन्हें सुनकर हमारा दिल टूट जाता है।

10. आपने जनता को उनकी बेल पर क्रॉल किया।

11. अलस ओ क्रूरय आपको दया नहीं आई, ओ देहाती।

12. आपने बैसाखी मेले में उत्पीड़न को कम किया।

ब्रिटिश भारत एवं देशी राज्य

मुख्य लेख: ब्रिटिश भारत में रियासतें

ब्रिटिश राज के दौरान भारत में दो प्रकार के क्षेत्र थे

- ब्रिटिश भारत: भारतीय गवर्नर जनरल या भारतीय गवर्नर जनरल के अधीनस्थ किसी भी अधिकारी के माध्यम से महारानी द्वारा नियंत्रित प्रदेश एवं क्षेत्र।
- देशी राज्य: महारानी के आधिपत्य में आने वाले स्वतन्त्र राज्य।

अर्थव्यवस्था पर प्रभाव

19वीं शताब्दी के दूसरे भाग में ब्रिटिश राजशाही द्वारा भारत का प्रत्यक्ष प्रशासन और औद्योगिक क्रांति से शुरु हुआ प्रौद्योगिकी परिवर्तन,दोनों ने ग्रेट ब्रिटेन और भारत की अर्थव्यवस्थाओं को नजदीकी रूप से मिला दिया[3], बल्कि परिवहन और संचार (जो आम तौर पर भारत के राजशाही शासन से जुड़े हैं) के कई बड़े बदलाव वास्तव में गदर से पहले ही शुरू हो गए थे। चूंकि डलहौजी ने प्रौद्योगिकीय परिवर्तन को अपनाया जो उस वक्त ग्रेट ब्रिटेन में बड़े पैमाने पर चल रहा था, भारत ने भी उन सभी प्रौद्योगिकी का तेजी से विकास देखा. रेलवे, सड़क, नहर और पुल को भारत में तेजी से बनाया गया और साथ ही टेलीग्राफ लिंकों को भी स्थापित किया गया ताकि कच्चे माल, जैसे कि कपास को भारत के सुदूर क्षेत्रों से बंबई जैसे बंदरगाहों के लिए प्रभावी रूप से भेजा जा सके और उसे फिर इंग्लैंड निर्यात किया जा सके.[4] इसी तरह, इंग्लैंड में तैयार माल को तेजी से बढ़ते भारतीय बाजार में बिक्री के लिए वापस उसी कुशलतापूर्वक भेजा जाता था।[5], हालांकि, खुद ब्रिटेन के विपरीत, जहां बुनियादी सुविधाओं के विकास में जोखिम, निजी निवेशकों द्वारा वहन किये जाते थे, भारत में करदाताओं-मुख्य रूप से किसान और कृषि मजदूरों- को जोखिम सहना पड़ता था, जो अंत में, 50 मीलियन पाउंड होता था।[6] इन लागतों के बावजूद, भारतीयों के लिए बहुत कम कुशल रोजगार सृजित किये गए। 1920 तक, विश्व में चैथा सबसे बड़ा रेलवे नेटवर्क अपने निर्माण के 60 वर्षों के इतिहास के साथ भारतीय रेल में 'बेहतर पदों' पर केवल दस फीसदी भारतीय काबिज थे।

प्रौद्योगिकी की बाढ़ भी भारत में कृषि अर्थव्यवस्था को बदल रही थी: 19वीं सदी के आखिरी दशक में, कच्चे माल की बड़ी मात्रा- न केवल कपास, बल्कि कुछ खाद्यान्न- को सुदूर बाजारों में निर्यात किया गया।[8] नतीजतन, कई छोटे किसानों ने, जो उन बाजारों के उतार-चढ़ाव पर निर्भर थे, सूदखोरों के हाथों अपनी भूमि, पशुधन और उपकरणों को गंवा दिया[8], अधिक प्रभावशाली ढंग से, 19वीं सदी के उत्तरार्ध में भारत में अकाल पड़े जो बड़े पैमाने पर गंभीर थे। हालांकि अकाल इस उपमहाद्वीप के लिए नए नहीं थे, लेकिन ये गंभीर थे, जिसके चलते लाखों लोग मारे गए[9], और कई ब्रिटिश और भारतीय आलोचकों ने इसके लिए भीमकाय औपनिवेशिक प्रशासन को जिम्मेदार ठहराया,

स्वशासन की शुरुआत

ब्रिटिश भारत में स्व-शासन की ओर पहला कदम 19वीं सदी में उठाया गया जब ब्रिटिश वाइसराय को सलाह देने के लिए भारतीय सलाहकारों की नियुक्ति की गई और भारतीय सदस्यों वाली प्रांतीय परिषदों का गठन किया गयाय ब्रिटिश ने बाद में भारतीय परिषद अधिनियम 1892 के साथ विधायी परिषदों में भागीदारी को और विस्तृत किया। नगर निगम और जिला बोर्ड को स्थानीय प्रशासन के लिए बनाया गयाय उनमें चुने हुए भारतीय सदस्य शामिल थे।

www.ignited.in

1909 का भारत सरकार अधिनियम - जिसे मॉर्ले-मिंटो सुधार के रूप में भी जाना जाता है (जॉन मॉर्ले भारत के लिए राज्य सचिव था और गिल्बर्ट इलियट, मिंटो का चैथा अर्ल, वाइसराय था) - ने केंद्रीय और प्रांतीय विधानसभाओं में जिसे विधान परिषद के रूप में जाना जाता था भारतीयों को सीमित भूमिकाएं सौंपी. भारतीयों को इससे पहले विधान परिषदों में नियुक्त किया गया था, लेकिन सुधार के बाद उन्हें इसके लिए चुना जाने लगा. केंद्र में परिषद के अधिकांश सदस्य सरकार द्वारा नियुक्त अधिकारी ही थे और वाइसराय किसी भी रूप में विधायिका के प्रति जिम्मेदार नहीं था। प्रांतीय स्तर पर अनौपचारिक रूप से नियुक्त सदस्यों के साथ निर्वाचित सदस्यों की संख्या नियुक्त अधिकारियों से अधिक थी, लेकिन विधायिका के प्रति राज्यपाल के दायित्वों पर विचार नहीं किया गया था। मॉर्ले ने ब्रिटिश संसद में इस नियम को पेश करते समय यह स्पष्ट कर दिया था कि संसदीय स्वशासन ब्रिटिश सरकार का लक्ष्य नहीं था।

मॉर्ले-मिंटो सुधार मील का पत्थर थे। कदम दर कदम, भारतीय विधान परिषद में सदस्यता के लिए ऐच्छिक सिद्धांत को शुरू किया गया। 'निर्वाचन क्षेत्र' उच्च वर्ग के भारतीयों के एक छोटे समूह के लिए सीमित था। ये निर्वाचित सदस्य "आधिकारिक सरकार" के एक 'विरोधी' बन गए। जातीय निर्वाचन क्षेत्र को बाद में अन्य समुदायों में विस्तारित किया गया और धर्म के माध्यम से समूह की पहचान करने की भारतीय प्रवृत्ति का एक राजनैतिक पहलू बन गया।

प्रथम विश्व युद्ध और उसका परिणाम

प्रथम विश्व युद्ध, भारत और ब्रिटेन के बीच शाही संबंध के लिए एक विभाजक साबित हुआ। युद्ध में ब्रिटिश इंडियन आर्मी के 1.4 मीलियन भारतीय और ब्रिटिश सैनिकों ने भाग लिया और युद्ध में उनकी भागीदारी से व्यापक सांस्कृतिक प्रभाव पड़े: ब्रिटिश सैनिकों के साथ युद्ध में हिस्सा ले रहे और मर रहे भारतीय सैनिकों की खबर और साथ ही कनाडाई और ऑस्ट्रेलियाई उपनिवेश के सैनिकों की खबर अखबारों और रेडियो के नवीन माध्यम से विश्व के सुदूर क्षेत्रों में फैली.[10], भारत की अंतरराष्ट्रीय हैसियत उसके बाद बढ़ी और 1920 के दशक में उभरती रही.[10], इसके परिणामस्वरूप भारत 1920 में लीग ऑफ नेशंस का एक संस्थापक सदस्य बन गया और नेदम एंटवर्प में 1920 के हतममौउ ओलंपिक में 'लेस इंडस अन्ग्लैसेस' (ब्रिटिश इंडीज) नाम के तहत हिस्सा लिया।[11], यहां भारत में विशेष रूप से भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नेताओं के बीच भारतीयों के लिए अधिक स्व-शासन की मांग उठने लगी.1916 में, लखनऊ संधि पर हस्ताक्षर होने के साथ ही राष्ट्रवादियों द्वारा प्रदर्शित की गई नई शक्ति और होम रूल लीग की स्थापना और मेसोपोटेमिया अभियान में विफलता के बाद यह एहसास कि युद्ध लंबा चल सकता है, नए वाइसराय, लॉर्ड चेम्सफोर्ड ने सतर्क किया कि भारत की सरकार को भारतीय मांगों के प्रति अधिक उत्तरदायी होने की जरूरत है।[12], वर्ष के अंत में, लंदन में सरकार के साथ विचार विमर्श के बाद उन्होंने सुझाव दिया कि युद्ध में भारतीयों की भूमिका के मद्देनजर ब्रिटिश लोगों को उनके प्रति बेहतर विश्वास जताना चाहिए और विभिन्न सार्वजनिक कार्यों के माध्यम से जिसमें शामिल हैं राजाओं को पुरस्कार और खिताब का सम्मान, सेना में भारतीयों को कमीशन देना और कपास पर अत्यधिक धिक्कारित आबकारी कर को हटा कर ऐसा किया जाना चाहिए, लेकिन सबसे महत्वपूर्ण बात है, भारत के लिए ब्रिटेन की भावी योजना और कुछ ठोस कदम का संकेत देना.[12], अधिक चर्चा के बाद, अगस्त 1917 में, नए लिबरल, भारत के सेक्रेटरी ऑफ स्टेट एडविन मोंटेगू ने ब्रिटिश उद्देश्य की घोषणा की जिसके तहत ष्प्रशासन की हर शाखा में भारतीयों की बढ़ती भागीदारी और स्व-शासी संस्थाओं का क्रमिक विकास किया जाएगा, ताकि ब्रिटिश साम्राज्य के अभिन्न हिस्से के रूप में भारत में एक जिम्मेदार सरकार को स्थापित किया जा सके.[12], इससे शिक्षित भारतीयों में एक बार फिर विश्वास पैदा किया गया, जिन्हें अब तक पृथक अल्पसंख्यक के रूप में तिरस्कृत किया गया था, जिन्हें मोंटेगू ने 'बौद्धिक रूप से हमारे बच्चे' कह कर वर्णित किया।[13], सुधारों की गति को ब्रिटेन द्वारा निर्धारित किया जाना था जिन्होंने महसूस किया भारतीयों ने इसके लिए अपनी अधिकारिता को साबित किया था।[13], लेकिन, यद्यपि योजना के तहत सीमित स्वशासन को शुरुआत में केवल प्रान्तों तक सीमित रखा जाना था - चूंकि भारत प्रभावी रूप से ब्रिटिश साम्राज्य के अंतर्गत था - इसने एक गैर-श्वेत उपनिवेश में किसी भी प्रकार की प्रतिनिधि सरकार के लिए प्रथम ब्रिटिश प्रस्ताव को प्रदर्शित किया।

इससे पहले प्रथम विश्व युद्ध की शुरुआत पर, भारत की अधिकांश ब्रिटिश सेना की यूरोप और मेसोपोटामिया में पुनः तैनाती के कारण पूर्व वायसराय लॉर्ड हार्डिंग को 'भारत से सेना हटाने में निहित खतरे' के प्रति चिंतित कर दिया था।[10], क्रांतिकारी हिंसा पहले से ही ब्रिटिश भारत में एक चिंता का विषय थीय इसके परिणामस्वरूप 1915 में, नाजुक हालातों को देखते हुए अपनी सत्ता को मजबूत करने के लिए, भारत सरकार ने डिफेन्स ऑफ इंडिया एक्ट पारित किया, जिसने उसे राजनीतिक रूप से खतरनाक विरोधियों को बिना किसी आवश्यक प्रक्रिया के हिरासत में लेने का अधिकार

www.ignited.in

सौंपा और 1910 के प्रेस अधिनियम के तहत मिले अधिकार के अलावा उन्हें और अधकार दिए जिसके दम पर वे पत्रकारों को बिना किसी मुकदमे के कैद कर सकते थे और प्रेस पर प्रतिबन्ध लगा सकते थे।[14], पर अब, जब संवैधानिक सुधार पर गंभीरता से चर्चा होने लगी, ब्रिटिश ने विचार करना शुरू किया कि कैसे नए उदारवादी भारतीयों को संवैधानिक राजनीति में लाया जाए और साथ ही साथ स्थापित संवैधानवादियों के हाथ कैसे मजबूत किये जाएं.[14], बहरहाल, सुधार योजना को एक ऐसे समय में तैयार किया गया था जब युद्ध काल के सरकारी नियंत्रण के परिणामस्वरूप उग्रपंथी हिंसा दब गई थी और अब क्रांतिकारी हिंसा के एक बार फिर उभरने की आशंका थी,[13], सरकार ने यह भी योजना बनानी शुरू कर दी थी कि कैसे युद्ध काल की शक्तियों को शांति काल में विस्तारित किया जाए.

इसके परिणामस्वरूप 1917 में, तब भी जब एडविन मोंटेगू ने नए संवैधानिक सुधारों की घोषणा की, ब्रिटिश जज, मिस्टर एस.ए.टी. रोलेट की अध्यक्षता में एक राजद्रोह समिति को युद्धकालिक क्रांतिकारी षड्यंत्र और भारत में हिंसा के लिए जर्मन और बोल्शेविक संबंधों की जांच का जिम्मा सौंपा गया[15],[16],[17], जिसका अनकहा लक्ष्य सरकार की युद्धकाल की शक्तियों को विस्तारित करना था।[12], रोलेट कमेटी ने जुलाई 1918 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की और षड़यंत्रपूर्ण विद्रोह के तीन क्षेत्रों की पहचान की: बंगाल, बम्बई और पंजाब.[12], इन क्षेत्रों में विध्वंसक कृत्यों का मुकाबला करने के लिए, समिति ने सिफारिश की कि सरकार को युद्धकाल की समानता वाले आपात अधिकारों का प्रयोग करना चाहिए, जिसमें शामिल था बिना निर्णायक मंडल के तीन न्यायाधीशों के एक पैनल द्वारा राजद्रोह के मामलों का मुकदमा चलाना, संदिग्धों से प्रतिभूतियों की वसूली, संदिग्धों के घरों की सरकारी निगरानी,[12], और प्रांतीय सरकारों का संदिग्धों को बिना मुकदमे के गिरफ्तार करना और अल्प अवधि हिरासत में रखने का अधिकार.[18],

प्रथम विश्व युद्ध की समाप्ति के साथ, आर्थिक माहौल में भी एक बदलाव देखा गया। वर्ष 1919 की समाप्ति तक, 1.5 मीलियन भारतीयों ने सशस्त्र सेना में अपनी सेवाएं दीं, या तो लड़ाकू के रूप में या फिर गैर-लड़ाकू के रूप में और भारत ने युद्ध के लिए £146 मिलियन का राजस्व प्रदान किया।[19], घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में अवरोधों के साथ-साथ करों में वृद्धि के फलस्वरूप 1914 और 1920 के बीच भारत में कीमतों के समग्र सूचकांक में लगभग दोगुनी वृद्धि हुई.[19], युद्ध से लौटने वाले सैनिकों के चलते, विशेष रूप से पंजाब में बेरोजगारी का संकट बढ़ गया[20], और युद्ध-पश्चात की मुद्रास्फीति ने बॉम्बे, मद्रास और बंगाल प्रान्तों में खाद्य दंगों को भड़काया,[20], और इस स्थिति को 1918-19 के मानसून और मुनाफाखोरी और सट्टेबाजी ने और भी भयावह बना दिया.[19], वैश्विक इन्फ्लूएंजा महामारी और 1917 की बोल्शेविक क्रान्ति ने जनमानस को और भयग्रस्त कियाय पहले वाले ने पहले से ही आर्थिक संकट का सामना कर रही आबादी को डराया,[20], और दूसरे वाले ने सरकारी अधिकारियों को, जिन्हें भारत में ऐसी ही क्रांति होने का भय था।[21],

संभावित संकट का मुकाबला करने के लिए, सरकार ने रोलेट समिति की सिफारिशों को दो रोलेट विधेयक के मसौदे के रूप में तैयार किया।[18], यद्यपि ये विधेयक एडविन मोंटेगू द्वारा विधायी विचारार्थ अधिकृत थे, इसे बड़ी अन्यमनस्कता से किया गया कि और साथ में यह घोषणा की गई, पहली नजर में मैं इस सुझाव की निंदा करता हूं कि भारत रक्षा अधिनियम को शान्ति काल में भी संरक्षित किया जाए, वह भी इस हद तक जितना रोलेट और उनके मित्र आवश्यक समझते हैं।[12], इंपीरियल लेजिस्लेटिव काउंसिल में आगामी चर्चा और मतदान में, सभी भारतीय सदस्यों ने विधेयक के विरोध में आवाज उठाई. फिर भी भारत सरकार ने अपने 'आधिकारिक बहुमत' का प्रयोग करते हुए 1919 के पूर्वार्ध में इन विधेयक को पारित करने में सफल हुई.[12], हालांकि, इसने भारतीय विपक्ष के सम्मान में जो पारित किया वह पहले विधेयक का लघु संस्करण था, जिसने अतिरिक्त न्यायिक शक्तियां प्रदान की, लेकिन वास्तव में तीन साल की अवधि के लिए और केवल 'अराजक और क्रांतिकारी आंदोलनों' के अभियोजन के लिए और भारतीय दंड संहिता के संशोधन संबंधित दूसरे विधेयक को छोड़ दिया गया।[12], फिर भी, जब इसे पारित किया गया तब इस नए रोलेट एक्ट ने भारत भर में व्यापक रोष जगाया और राष्ट्रवादी आंदोलन के अगुआ के रूप में मोहनदास गांधी को प्रस्तुत किया।[18],

इस बीच, मोंटेगू और चेम्सफोर्ड ने खुद अंत में पिछली सर्दियों में भारत में एक लम्बी तथ्य खोजी यात्रा के बाद जुलाई 1918 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की.[22], ब्रिटेन में संसद और सरकार के बीच काफी चर्चा के बाद और और भारत की जनसंख्या के बीच भावी चुनाव में कौन मतदान कर सकता है इसकी पहचान के उद्देश्य से फ्रेंचाईज एंड फंक्शन कमिटी की एक अन्य यात्रा के पश्चात, भारत सरकार अधिनियम 1919 (मोंटेगू-चेम्सफोर्ड सुधार के रूप में भी ज्ञात) को दिसंबर 1919 में पारित किया गया।[22], नए अधिनियम ने प्रांतीय परिषदों को अधिक बड़ा किया और इम्पीरियल विधान परिषद को एक विशाल केन्द्रीय विधान परिषद में परिवर्तित किया। इसने, 'आधिकारिक बहुमत' को प्रतिकूल वोटों के रूप में भारत सरकार के सहारे को निरसित कर दिया.[22],

www.ignited.in

यद्यपि रक्षा, विदेशी मामले, आपराधिक कानून, संचार और आय कर जैसे विभाग वायसराय और नई दिल्ली में केन्द्रीय सरकार के अधीन ही थे, अन्य विभाग जैसे कि सार्वजनिक स्वास्थ्य, शिक्षा, भू-राजस्व और स्थानीय स्व-शासन को प्रान्तों को हस्तांतरित कर दिया गया था।[22], स्वयं प्रांतों को अब नए द्विशासन प्रणाली के तहत प्रशासित किया जाना था, जहां कुछ क्षेत्र जैसे शिक्षा, कृषि, बुनियादी ढांचे का विकास और स्थानीय स्व-शासन और अंततः भारतीय चुनाव क्षेत्र भारतीय मंत्रियों और विधायिकाओं के अधीन आ गए, जबकि सिंचाई, भू-राजस्व, पुलिस, जेल और मीडिया नियंत्रण ब्रिटिश गवर्नर और उसकी कार्यकारी परिषद के दायरे के भीतर बने रहे.[22], नए कानून ने भारतीयों के लिए सिविल सेवा और सेना अधिकारी कोर में भर्ती होने को भी आसान कर दिया. भारतीयों की अब एक बड़ी संख्या को मताधिकार मिल गया, यद्यपि, राष्ट्रीय स्तर के मतदान में, वे कुल वयस्क पुरुष जनसंख्या का 10% ही थे, जिनमें से कई अभी भी निरक्षर थे।, प्रांतीय विधायिकाओं में, ब्रिटिश ने कुछ नियंत्रण बनाए रखा जिसके लिए उन्होंने सीटों को विशेष हितों के लिए अलग रखा जिसे वे सहकारी या उपयोगी मानते थे। विशेष रूप से, ग्रामीण उम्मीदवारों को जो आमतौर पर ब्रिटिश शासन के प्रति सहानुभूति रखते थे और कम विरोधी थे, उन्हें शहरी समकक्षों की तुलना में अधिक सीटें मिलती थीं।गैर-ब्राह्मण, जमींदारों, व्यापारियों और कॉलेज के स्नातकों के लिए भी सीटें आरक्षित थी। मिंटो-मॉर्ले सुधारों का अभिन्न हिस्सा, 'सांप्रदायिक प्रतिनिधित्व' का सिद्धांत और अधिक हाल में कांग्रेस-मुस्लिम लीग लखनऊ संधि, की पुनः पुष्टि की गई, जिसके तहत सीटों को मुस्लिम, सिख, भारतीय ईसाई, एंग्लो-इंडियन और अधिवासित यूरोपियों के लिए प्रांतीय और इंपीरियल विधायी परिषदों, दोनों जगह आरक्षित किया गया।[22], मोंटेगू-चेम्सफोर्ड सुधारों ने भारतीयों को विधायी शक्ति का प्रयोग करने का अब तक का सबसे महत्वपूर्ण अवसर प्रदान किया, विशेष रूप से प्रांतीय स्तर परय लेकिन वह अवसर भी मतदाताओं की सीमित संख्या के आधार पर, प्रांतीय विधानसभाओं के लिए उपलब्ध लघु बजट के आधार पर और ग्रामीण और विशेष हित वाली सीटें जिन्हें ब्रिटिश नियंत्रण के उपकरणों के रूप में देखा जाता था, प्रतिबंधित किया गया था।

1930 का दशक: भारत सरकार अधिनियम (1935)

1935 में, गोलमेज सम्मेलन के बाद, ब्रिटिश संसद ने भारत सरकार अधिनियम को मंजूरी दे दी, जिसने ब्रिटिश भारत के सभी प्रान्तों में स्वतन्त्र विधानसभाओं की स्थापना, एक केंद्रीय सरकार का निर्माण जिसमें ब्रिटिश प्रांत और राजघराने, दोनों शामिल होंगे और मुस्लिम अल्पसंख्यकों की सुरक्षा को अधिकृत कर दिया., आगे चलकर स्वतंत्र भारत के संविधान ने इस अधिनियम से काफी कुछ ग्रहण किया।, इस अधिनियम ने एक द्विसदनीय राष्ट्रीय संसद और ब्रिटिश सरकार के दायरे में एक कार्यकारी शाखा का भी प्रावधान प्रस्तुत किया। हालांकि राष्ट्रीय महासंघ कभी अस्तित्व में नहीं आया, प्रांतीय विधानसभाओं के लिए देशव्यापी चुनाव 1937 में आयोजित किये गए। प्रारंभिक हिचकिचाहट के बावजूद, कांग्रेस ने चुनाव में भाग लिया और ब्रिटिश भारत के ग्यारह में से सात प्रान्तों में जीत हासिल की और इन प्रान्तों में व्यापक शक्तियों के साथ कांग्रेस की सरकार का गठन किया गया। ग्रेट ब्रिटेन में, जीत की इन घटनाओं ने भारतीय स्वतंत्रता के विचार के ज्वार उभारा.

द्वितीय विश्वयुद्ध

1939 में द्वितीय युद्ध के शुरू होने पर, वाइसराय, लॉर्ड लिनलिथगो ने बिना भारतीय नेताओं से परामर्श किये भारत की ओर से युद्ध घोषित कर दिया, जिसके चलते कांग्रेस प्रांतीय मंत्रालयों ने विरोध में इस्तीफा दे दिया. इसके विपरीत मुस्लिम लीग ने युद्ध के प्रयासों में ब्रिटेन का समर्थन कियाय लेकिन अब यह विचार पनपने लगा कि कांग्रेस के वर्चस्व वाले स्वतन्त्र भारत में मुसलमानों के साथ गलत तरीके से व्यवहार किया जाएगा. ब्रिटिश सरकार ने अपने क्रिप्स मिशन के माध्यम से युद्ध की खातिर भारतीय राष्ट्रवादियों के सहयोग को प्राप्त करने का प्रयास किया जिसके बदले में स्वतंत्रता का वादा किया गयाय लेकिन, कांग्रेस और उनके बीच वार्ता खंडित हो गई। गांधी ने, बाद में अगस्त 1942 में 'भारत छोड़ो' आंदोलन शुरू किया और मांग की कि अंग्रेज तुरंत भारत से वापस चले जायें अन्यथा उन्हें राष्ट्रव्यापी नागरिक अवज्ञा का सामना करना पड़ेगा. कांग्रेस के अन्य सभी नेताओं के साथ, गांधी को तुरंत कैद कर लिया गया और पूरे देश भर में छात्रों की अगुआई में हिंसक प्रदर्शन भड़क उठे और बाद में इसमें किसान, राजनितिक समूह भी शामिल हो गए, विशेष रूप से पूर्वी संयुक्त प्रांत, बिहार और पश्चिमी बंगाल में. युद्ध के प्रयोजन से भारत में मौजूद ब्रिटिश सेना की बड़ी संख्या ने, छह सप्ताह से कुछ अधिक समय में ही आंदोलन को कुचल दियाय[25], फिर भी, आंदोलन के एक हिस्से ने कुछ समय के लिए नेपाल की सीमा पर एक भूमिगत अस्थायी सरकार का गठन कर लिया।[25], भारत के अन्य भागों में, आंदोलन कम सहज और विरोध कम तीव्र था, लेकिन फिर भी यह 1943 की गर्मियों तक चला. कांग्रेस नेताओं के जेल में होने से, ध्यान सुभाष बोस पर गया, जिन्हें

www.ignited.in

अपेक्षाकृत अधिक रूढ़िवादी हाई कमान के साथ मतभेद के बाद 1939 में कांग्रेस से निकाल दिया गया थाय[27], बोस ने अब अपना रुख धुरी शक्तियों की तरफ किया ताकि भारत को बलपूर्वक आजाद कराया जा सके.[28], जापानी समर्थन के साथ, उन्होंने इंडियन नेशनल आर्मी का गठन किया, जिसमें मुख्य रूप से ब्रिटिश इंडियन आर्मी के भारतीय सिपाही थे जिन्हें सिंगापुर में पकड़ा गया था। युद्ध की शुरुआत से, जापानी गुप्त सेवा ने ब्रिटिश युद्ध प्रयासों को अस्थिर करने के लिए दक्षिण-पूर्व एशिया में अशांति को बढ़ावा दिया थाय[29], और उसने कब्जा किये गए क्षेत्रों में कई अस्थायी और कठपुतली सरकारों का समर्थन किया, जिसमें बर्मा, फिलीपींस और वियतनाम शामिल थे और साथ ही बोस की अध्यक्षता में आजाद हिंद की अस्थाई सरकार को भी.[30], बोस के प्रयास, हालांकि अल्पकालिक रहेय 1944 की फेर-बदल के बाद, प्रबल ब्रिटिश सेना ने 1945 में जापान के यू गो आक्रमण को पहले रोका और फिर पलट दिया और सफल बर्मा अभियान की शुरुआत की. बोस की आजाद हिंद फौज ने सिंगापुर पर पुनः कब्जा हो जाने के बाद आत्मसमर्पण कर दिया और उसके शीघ्र बाद बोस की मृत्यु एक विमान दुर्घटना में हो गई। 1945 के उत्तरार्ध में लाल किले में आजाद हिंद फौज के सिपाहियों पर चलाये गए मुकदमे ने भारत में सार्वजनिक अशांति और राष्ट्रवादी हिंसा को भड़काया.

प्रमुख प्रांत

20वीं सदी के अंत में, ब्रिटिश भारत आठ प्रांतों से बना था, जिसका प्रशासन राज्यपाल या उप-राज्यपाल करते थे। निम्न तालिका उनके (आश्रित देशी राज्यों को छोड़कर) क्षेत्रफल एवं जनसंख्या को सूचीबद्ध करती है (लगभग सन 1907)

निष्कर्ष

इस प्रकार, यह ध्यान दिया जा सकता है कि पुस्तिका में ब्रिटिश शासन के लगभग हर पहलू पर बहस की गई है। यह भी तर्क दिया गया है कि अंग्रेज भारत में कैसे आए और उन्होंने आधुनिकीकरण के नाम पर भारतीय सामाजिक व्यवस्था के मूल वस्त्रों को कैसे नष्ट किया। सामग्री की एक महत्वपूर्ण प्रशंसा समझदारी से उन रुझानों में मदद करती है जो सबाल्टर्न वर्गों के बीच बढ़ रहे थे जो महात्मा गांधी के समग्र मार्गदर्शन में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नेतृत्व में स्वतंत्रता संग्राम में तेजी से शामिल हो रहे थे। उपरोक्त वर्णित पैम्फलेट्स की राजसी प्रकृति को देखते हुए, ब्रिटिश सरकार ने भारतीय दंड संहिता (IPC) की धारा 124-। और 153-। के तहत इन साक्षरों को दंडित किया और CR का 99-। किया। पी। सी। के रूप में वे अंग्रेजों के खिलाफ नफरत पैदा कर रहे थे। उपरोक्त चर्चा में पुन: प्रस्तुत किए गए दस्तावेजों की उम्मीद भारत के स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास का अध्ययन करने वाले विद्वानों द्वारा की जाएगी। जिस कोण से व्यक्तिगत विद्वानों द्वारा इनका अध्ययन किया जा सकता है, उससे संबंधित जानकारी का एक महत्वपूर्ण और वैज्ञानिक विश्लेषण अनिवार्य रूप से स्वतंत्रता संग्राम में सबाल्टर्न वर्गों की महत्वपूर्ण भूमिका को ध्यान में रखते हुए किया जाएगा।

संदर्भ

1. रामसुहाग (1924) भारतीयो को हिंदी में एक पत्रक बेहरमपुर मेला, जिला शाहाबाद में मिला। राजनैतिक विशेष फाइल नंबर 1822/1924 देखें, इसके बाद बीएसए, बिहार, भारत।

2. सत्येंद्र एनएम, स्वाधीनारत डीए। बंगाली पैम्फलेट आनंद बाजार पत्रिका में प्रकाशित हुआ और श्री गोरंगा प्रेस, कलकत्ता, भारत में छपा।

3. श्री एम, गौरांग जी (1931) का एक पत्ता हिंदी में मुजफ्फरपुर, बिहार में प्रचलन में पाया गया।

4. जय के (1932) का पत्ता बंदे मातरम स्वाधीन भटट। इंडियन यूथ लीग और शंभू प्रेस, चटगाँव, महाराष्ट्र, भारत में मुद्रित।

5. महादेव प्रसाद एस। कुटनी बियोग, एक हिंदी पुस्तिका, श्री प्रेस, कलकत्ता, भारत में मुद्रित।

6. खादी के कपड़े के लिए मोतिया (खुरदरे) कपड़े का इस्तेमाल किया गया है।

7. पंडित एस (1923) उर्दू पत्र को शैतान शैतान इमान की झपट और हमरा गांधी शब्द के साथ समाप्त होते देखें। धामुआ नवासी, विद्या भंडार प्रेस, लखनऊ, भारत में।

8. (1923) एक हिंदी पुस्तिका, बंदे मातरम भारत उध्र को धारा 99-ए सीआर के तहत निर्धारित किया गया था। पी.सी. पंपलेट झरिया जिला मोंगहियर में प्रचलन में पाया गया, जहां यह गांधी आश्रम, गिधौर, भारत के एक कांग्रेसी कार्यकर्ता कन्हैया प्रसाद सिंह द्वारा बेचा जा रहा था।

www.ignited.in

9. मदन एमके (1930) एक हिंदी पत्रक, राष्ट्रीय गायन, कैलाश प्रिंटिंग प्रेस, बांकीपुर, पटना, भारत में मुद्रित।

10. राधा केएस (1930) हिंदी पत्रक, स्वराज्य दिग्दर्शन, जिसे कैलीश प्रिंटिंग प्रेस, बांकीपोर, पटना, भारत में मुद्रित किया गया था।

11. बंगाली पर्चे के हकदार, बिप्लबी स्नेमे को भारत के महासचिव रणबीर सिंह द्वारा हस्ताक्षरित किया गया है।

12. बलबीर जी, खट्टा मीठा सी (1930) एक हिंदी पत्रक जिसमें प्रकाशक और प्रेस, भारत का नाम नहीं है।

13. (1930) पं। द्वारा राष्ट्रीय तलवार प्रकाशक के लिए हिंदी पुस्तिका देखें। प्रभु नारायण मिश्रा, बुकसेलर, पुष्कर भंडारचैक, गया, अर्जुन प्रेस काशी (बनारस), भारत में मुद्रित।

14. (1930) पटना राष्ट्रीय काजरी के रूप नारायण लाल, रामेश्वर पुस्तकल, अथमलगोला पटना, भारत द्वारा प्रकाशित एक हिंदी पुस्तिका।

Corresponding Author

Rupa Kumari*

PhD Holder, B. R. A. Bihar University, Muzaffarpur

www.ignited.in